अध्याय – प्रथम

शोध परिचय

प्रस्तावना

1.1 भूमिका

1.2 शिक्षक और अध्यापन

1.3 समस्या कथन

1.4 प्रस्तुत शोध अध्ययन की

आवश्यकता एंव महत्व

1.5 शोध में प्रयुक्त शब्दावली की परिभाषा

1.6 शोध के चर

1.7 शोध के उद्देश्य

1.8 अनुसंधान की परिकल्पना

1.9 समस्या का सीमांकन

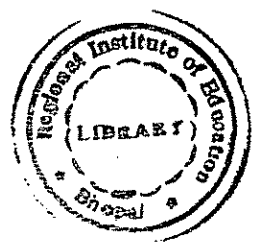

अध्याय – 1

प्रस्तावना :–

हमें स्वतंत्र हुये 64 वर्ष बीत गये हैं। इस दौरान हमारी शिक्षा प्रणाली अपने परंपरागत और परिभाषागत अर्थों से दूर हटते हुये अध्यव्यवसाय से निकलकर व्यवसाय की गिरफ्त में जा पहुंची है,परीक्षा प्रणाली भी छात्रों को वार्षिक स्वयंवरों में मत्स्यास रूपी अंकीय लक्ष्यों पर ध्यान केद्रित कर,ज्ञान की बजाय तकनीक और उत्तराभ्यास की बैसाखी के सहारे निशाना साधने को प्रेरित करती है। परिणामगत शिक्षित व्यक्ति का अभिज्ञान अवज्ञान से नहीं,कागज पत्रों से होने लगा है। और प्रमाणपत्रीय योग्यता ज्ञानेत्तर माध्यमों से प्राप्त उच्चतर अंको पर आश्रित हो गई है। और तो और अल्पज्ञानी छात्र भी आजकल तकनीकी तरीकों से शतप्रतिशत सफलता की फीस माफ गारंटी से आश्वस्त करा दिया जाता है।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली व्यक्ति को सद्गुणी,सदाचारी नहीं,बहुगुणी अतिचारी बनाने की दिशा में स्पर्धात्मक रूप से अग्रसर है,शिक्षक का गुरूत्व घटते–घटते अदृश्य लघुता में परिवर्तित होकर शिक्षा व्यवसायियों की मुट्ठी में जा समाया है।शिक्षकगण अब शिक्षणतंत्र के एक परिहार्य पुर्जे की तरह मात्र कर्मचारी या सेवक बनकर रह गये हैं,आजाद मुल्क में ज्ञान संपदा की यह शैशयील विरासत ही तो हम भरतीय पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित करते जा रहे हैं।हमारे देश की शिक्षा व्यवस्था की दीपपूर्ण संरचना समाज के सृजनशील भविष्य की ऐसी तस्वीर प्रस्तुत करती है जो तथाकथित शिक्षा व्यवसायियों की लूट खसोट का ब्लू प्रिंट सी प्रतीत होती है।

1.1 भूमिका

पशु और मनुष्य में आहार,निद्रा,भय,भोग आदि की विशेषतायें समान रूप से पाई जाती है। लेकिन शिक्षा और ज्ञान ही एक ऐसी विशेषतायें हैं जो मनुष्य को मनुष्य बनाये हुयें हैं।

शिक्षा वह प्रकाश है जिसके द्वारा बालक की समस्त शारीरिक,मानसिक,सामाजिक तथा आध्यात्मिक विकास होता है। इससे वह समाज की सर्वांगीण उन्नति में अपनी शक्ति का

उत्तरोत्तर प्रयोग करने की भावना से ओतप्रोत होकर संस्कृति तथा सभ्यता को पुनर्जीवित एंव पुनर्स्थापित करने के लिए प्रेरित हो जाता है।

काका साहेब कालेलकर के अनुसार–

शिक्षा कहती है,मैं विज्ञान नहीं,सत्ता की दासी नहीं,किसी शास्त्र की गुलाम नहीं, अपितु मैं मानव के हृदय,बुद्वि एंव अन्य समग्र शक्तियों की स्वाभीमानी हूं। मानव शास्त्र एंव समाज शास्त्र मेरे दो चरण है। कला और हुनर मेरे हाथ हैं,विज्ञान मेरा मस्तिष्क है,धर्म मेरा हृदय है,निरक्षण व तर्क मेरे चक्षु हैं,इतिहास मेरे कान हैं।आजादी मेरी श्वास हैं,उत्साह व उद्योग मेरे फेफड़ें हैं,धैर्य मेरा व्रत हैं,श्रद्धा मेरी पूंजी है।मैं समग्र कामनायें पूर्ण करने वाली जगदम्बा हूं। सच्चे अर्थ में शिक्षा जगदम्बा हूं।

इस प्रकार शिक्षा हम सबके जीवन का अनिवार्य अंश है।शिक्षा का महत्व दिनों दिन बढ़ता ही चला जा रहा है। शिक्षा शब्द संस्कृत के शिक्ष् धातु से बना है। शिक्षा का अर्थ सीखना है। सीखने की प्रकिया शिशु के जन्म से मृत्यु तक चलते रहती है। शिक्षा आजीवन चलने वाली एक ऐसी प्रकिया है। जिसके द्वारा व्यक्ति का शारीरिक बौद्धिक भावनात्मक सामाजिक एंव आध्यात्मिक व्यक्तित्व का विकास संपर्क रीति से होता है।

एडमस महोदय का भी विचार है कि शिक्षा में दो धुरी होती है–

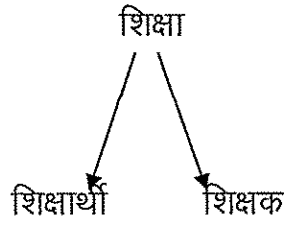

बालक के व्यक्तित्व विकास में गुरू का महत्व सर्वकालिक है। प्राचीन भारतीय संस्कृति में गुरू को बृम्हा,विष्णु,महेश के समकक्ष माना गया है।

गुरू गोविंद दोउ खड़े,काके लागू पायें।
बलिहारी गुरू आपकी,गोविंद दियो बताये।।

प्राचीन समय में शिक्षक ही शिक्षा का सर्वेसर्वा माना जाता था। और उसी के अनुसार शिक्षा का रूप होता था। किंतु शिक्षा मनोवैज्ञानिक के प्रभाव से आज ऐसा नहीं है। फिर भी विधि का ज्ञाता शिक्षार्थी नहीं अब भी शिक्षक ही माना जाता है। शिक्षक अपने शिक्षार्थी को उत्तम विधियों द्वारा पाठयक्रम को हृदयमय कराते हुए लक्ष्य तक पहुंचने में पथ प्रदर्शक एंव सहायक होता है।

शिक्षा समाज और राष्ट्र के निर्माण का मूल आधार है। शिक्षक पर ही समाज की उन्नति निर्भर है। भवन निर्माण में जो स्थान ईटों का है,राष्ट्र निर्माण में वही स्थान शिक्षक का है। क्योंकि शिक्षक बालकों को समुचित शिक्षा प्रदान कर देश का भविष्य उज्जवल कर सकता है। शिक्षा के उद्देश्य देशकाल और परिस्थितियों के अनुसार निम्न प्रकार है:–

विभिन्न शिक्षा आयोगों ने शिक्षकों की स्थिति के बारे में विचार

कोठारी कमीशन–1964–1966

"आयोग" ने शिक्षक की स्थिति में सुधार करने के लिये जो विचार व्यक्त किये हैं,हम उनका क्रमबद्ध विवरण प्रस्तुत कर रहें हैं–

□भारत सरकार द्वारा विद्यालयों के शिक्षकों को न्यूनतम वेतनक्रम निश्चित किए जाये और राज्यों तथा केन्द्र शासित प्रदेशों को अपनी परिस्थितियों के अनुकूल समान और उच्च वेतनमान स्वीकारने में सहायता करनी चाहिए।

□सरकारी और गैर–सरकारी दोनों प्रकार के विद्यालयों के शिक्षकों के वेतनक्रमों समानता के सिद्धांत का पालन किया जाना चाहिए।

□शिक्षा संस्थाओं में शिक्षकों को कुशलतापूर्वक कार्य करने के लिए न्यूनतम सुविधायें प्रदान की जानी चाहिए।

□शिक्षकों की अपनी व्यावसायिक उन्नति करने के लिए उपयुक्त सुविधायें प्रदान की जानी चाहिए।

□शिक्षकों के अध्यापन कार्य के घंटों को निश्चित करते समय,उनके द्वारा किये जाने वाले अन्य कार्यों को ध्यान में रखा जाना चाहिये।

□सरकारी और गैर सरकारी विद्यालयों के शिक्षकों की सेवा दशाओं में समानता स्थापित की जानी चाहिये।

□शिक्षकों के लिये सरकारी गृह निर्माण योजनाओं को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति–1986

□सरकार और समाज की ऐसी परिस्थितियां बनानी चाहिए,जिनसे अध्यापकों को निर्माण और सृजनात्मक कार्य की ओर बढ़ने की प्रेरणा मिले।

□अध्यापकों को इन बात की आजादी होनी चाहिये कि वे नये प्रयोग कर सके और सम्प्रेषण की उपयुक्त विधियों और अपने समुदाय की समस्याओं और समताओं के अनुरूप नये उपाय निकाल सके।

□शिक्षकों की भर्ती प्रणाली में इस प्रकार परिवर्तन किया जाय कि उनका चयन उनकी योग्यता के आधार पर व्यक्ति निरपेक्ष रूप से और उनके कार्य की अपेक्षाओं के अनुरूप हो सके।

□शिक्षकों को वेतन और सेवा की शर्तें उनके सामाजिक और व्यावसायिक दायित्व के अनुरूप हों और ऐसी हो,जिससे प्रतिभाशाली व्यक्ति शिक्षण व्यवसाय की ओर आकृष्ट हो।

□व्यावसायिक प्रमाणीकता की हिमायत करने शिक्षक की प्रतिष्ठा को बढ़ाने और व्यावसायिक दुर्व्यवहार को रोकने में शिक्षक संघो को अहम भूमिका निभानी चाहिये।

शिक्षकों की वर्तमान अवस्था–

शिक्षा प्रगतिशील राष्ट्र की रीढ़ है, और शिक्षक शिक्षा पद्धति में विवर्तनी है। राष्ट्र की प्रगति इसके शिक्षकों की योग्यता पर निर्भर करती है। यह बात प्रशंसनीय है,कि अध्यापन का

व्यवसाय सब व्यवसायों में उत्तम है। पर भाग्य की विडंबना है,कि अध्यापन एक बहुत ही आकर्षक व्यवसाय है और शिक्षक समाज में देर से सम्माननीय स्थिति नहीं रखता।

भारत में आज शिक्षक आर्थिक दृष्टि से वह निर्धन है,सामाजिक दृष्टि से उसका दर्जा नीचा है,व्यावसायिक दृष्टि से उसका काम कठोर परिश्रम करने का है,और प्रशासनिक दृष्टि से उसके साथ बहुत भद्दा व्यवहार किया जाता है।

व्यावसायिक स्थितियां–

व्यवसाय स्वंय अध्यापक के लिये किसी प्रकार का आकर्षण नहीं रखता, क्योंकि कुछ दिनों की नौकरी के पश्चात् अध्यापक देखता है,कि उसको उन्नति करने के लिए अवसर नहीं मिल रहे,उसका कार्यभार असाधारण रूप से अधिक है,सेवा शर्तें बहुत बुरी हैं,और प्रशासकों की ओर उसे किसी प्रकार के प्रोत्साहन की आशा नहीं है। अध्यापक को अत्यधिक मानसिक तनाव भी सहन करना पड़ता है,जबकि उससे सप्ताह में 40 घंटे पढ़ाने की,सहपाठ्यक्रम क्रियाओं की देखभाल करने की,अनुशासन बनाये रखने की और भी अनेक कर्त्तव्य निभाने की आशा की जाती है। आज अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद के माहौल में राष्ट्र की धर्म निरपेक्षता,प्रजातांत्रिक गणराज्य की विशेषताओं को बनाए रखने के लिए देशभक्त नागरिकों की आवश्यकता है,और ऐसे नागरिकों को तैयार करने का कार्य शिक्षक के अलावा अन्य कोई व्यक्ति द्वारा संभव नहीं है। शिक्षक ही इस पुनीत कार्य को कक्षा के अंदर या बाहर दोनों तरह से कर सकता है। वह न केवल कक्षा के वातावरण को संशोधित या परिमार्जित करता है,वरण सम्पूर्ण विद्यालय के वातावरण को संवंर्धित करने के लिए प्रयासरत रहता है।

भले ही आज की विषम परिस्थितियों तथा दावाग्नि की तरह फैलते उपभोक्तावाद ने शिक्षक को भी व्यावसायिक बनने को बाध्य किया है,किंतु बालक के विकास में उसकी महत्वपूर्ण भूमिका थी, है और रहेगी।

1.2 शिक्षक और अध्यापन व्यवसाय–

शिक्षा में शिक्षक एंव अध्यापन व्यवसाय एक सिक्के के दो पहलू हैं,जिसको अलग करना असंभव है।

अध्यापन–छात्रों को कुछ विशिष्ट विषयों का ज्ञान प्रदान करना

शिक्षा में वस्तुतः हम इस ज्ञान को सम्मिलित कर लेते हैं,लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं है,शिक्षा एक त्रिध्रुवीय प्रकिया है,उसके मुख्य तीन घटक होते हैं। अध्यापक–पाठयक्रम–छात्र। शिक्षा में शैक्षिक कियायें जो पाठयक्रम से संबधित होती है,तथा सह शैक्षिक कियायें जो छात्रों और अध्यापकों के अनुभव विश्व तथा व्यक्तित्व घटकों से संबधित होती है। शिक्षा बालकों में व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करने के लिए अद्भुत भूमिका निर्वाह करती है। अध्यापकों को सदा केवल विषयों के अध्यापन तक ही सीमित न रहकर बालकों के सर्वांगीण विकास में अपना योगदान देने के लिये तत्पर रहना चाहिये। शिक्षक राष्ट्र का हितैषी है,छात्रों के उन्नयन के लिए सदैव प्रयत्नशील भी रहता है। बस आवश्यकता है तो छात्रों से प्रेम करने की,उनके साथ समय बिताने की,छात्रों के साथ कार्य करने की,आवश्यकतानुसार समस्या समाधान करने की,स्वयं के चरित्र से छात्रों के चरित्र को उबारने की। जब तक्षशिला का एक सैनिक को राजा बना सकता है,सम्पूर्ण देश को धन सम्पन्न बना सकता है,तो शिक्षक भावी पीढ़ी के उत्थान और राष्ट्र निर्माण के लिए चाणक्य की सी शक्ति को क्यों नहीं धारण कर सकतें हैं ?

"शिक्षक कभी साधारण नहीं होता प्रलय और निर्माण उसकी गोद में पलते हैं।"–चाणक्य

यह निर्विवाद है कि शिक्षा के स्तर और राष्ट्रीय विकास में शिक्षा के

योगदान को जितनी भी बातें प्रभावित करती हैं, उनमें शिक्षकों के गुण,उनकी क्षमता और उनका चरित्र सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। अतः आवश्यक है कि योग्यता वाले अध्यापक ही उन्हे सर्वोत्तम व्यावसायिक साधन उपलब्ध कराये जायें। और ऐसी संतोषप्रद स्थितियां बनाई जाए जिनमे वे प्रभावी ढंग से कार्य कर सकें।

हमारा विश्वास है कि जब तक अध्यापन कार्य अपना दर्जा नहीं बना लेता है,जो कि व्यक्ति और कार्य के प्रकार दोनों में प्रतिविम्बित हो, तब तक वह अपनी आर्थिक,सामाजिक स्थिति सुदृढ़ नहीं बना सकता है।हमें इस तथ्य का सामना करना होगा कि अध्यापक और शिक्षाविद् ही मुख्यतः अध्यापन के व्यावसायिक स्तर के लिये जिम्मेदार है।

1.3 समस्या कथन–

शिक्षक शिक्षा के विस्तार के कारण अच्छे शिक्षक मिलना कठिन हो गया।वर्तमान समय में कोई भी व्यक्ति अपने बच्चों को अध्यापक बनाना नहीं चाहते।हर कोई अपने बच्चे को डॉक्टर या इंजीनियर ही बनाना चाहता है। अच्छे शिक्षक के प्रशिक्षण की आवश्यकता उपस्थित हुई है।सिर्फ शिक्षकों की ज्यादा तादाद बढ़ाने से कोई फायदा नहीं है,बल्कि उनकी गुणवत्ता में सुधार लाना आवश्यक है।किसी कार्य की सफलता के लिए सकारात्मक अभिवृत्तियों का होना आवश्यक है।आज जब कि सरकार ने भी 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का प्रबन्ध किया है।ऐसे में शिक्षकों की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है।सीमित संसाधन होने पर भी देश के सभी बच्चों को शिक्षा की मुख्य धारा से जोड़ पाना तभी संभव हो पाएगा,जबकि शिक्षकों में सकारात्मक अभिवृत्तियों तथा उनमें अध्यापन व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एंव समर्पण का भाव हो।

सकारात्मक अध्यापन अभिवृत्ति के कारण अध्यापकों का कार्य बहुत ही आसान हो जाता है। उनको अपने व्यवसाय से पूर्ण संतोष भी मिलता है,और सम्मान व सफलता प्राप्त होती है।

1.4 प्रस्तुत शोध अध्ययन की आवश्यकता एंव महत्व–

संपूर्ण शिक्षा प्रणाली की प्रक्रिया की श्रंखला में अध्यापक की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। अध्यापक को शिक्षा रूपी मशीन का "फ्लाईव्हील" कहा गया है। वह ही अपने बालक की योग्यता,रूचि एंव आयु के अनुकूल उसके लक्ष्य को निर्धारित करके उसकी प्राप्ति के लिए पाठ्यक्रम का निर्माण करता है,तथा उस पाठ्यक्रम को उत्तम विधियों से बालक को हृदयगंम कराकर उसके निर्धारित लक्ष्य तक पहुंचाने में सहायता देता है।

शासकीय स्तर पर शिक्षा की चाहे कितनी ही योजना बना ली जाये,किंतु अध्यापक यदि उसे ठीक ढंग से कार्यान्वित न करे तो वह योजना कदापि सफल नहीं हो सकती। प्राथमिक स्तर पर विशेष ध्यान रखते हुये बालकों में शिक्षा का संस्कार बोने की जिम्मेदारी अध्यापक पर ही होती है।प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों का दायित्व और भी अधिक बढ़ जाता है, क्योंकि उनका संबंध उन सुकोमल बालकों से है जिन पर सम्पूर्ण शिक्षा की नींव

रखी जाती है। छात्रों के सामने अध्यापक एक आदर्श होता है। अध्यापक ही शिक्षा का आधारस्तम्भ है। शिक्षा के हर कार्य में वह नेतृत्व करता है। इसी प्रकार अध्यापक को समाज नेतृत्व करने वाला समाज रचयिता कहा जाता है।

मानव समाज में शिक्षा का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। सम्पूर्ण मानव जाति की उन्नति के लिये शिक्षकगण आदिकाल से ही प्रयत्न करते आये हैं

और मानव उत्थान के पुनीत कार्य में अपना जीवन अर्पित करते रहें हैं। मनुष्य अपनी वर्तमान उन्नत अवस्था एंव सभ्यता के लिये बहुत अंशो तक उन अध्यापकों का ऋणी है। जो समय–समय पर अपनी शिक्षा तथा जीवन के आदर्शों से उसे पोषित करते रहें हैं। जीवन के लक्ष्य एंव उद्देश्यों की प्राप्ति में उसका नेतृत्व मनुष्य को सफलतापूर्वक अग्रसर करता रहा है। उसे उन्हीं से स्फूर्ति और प्रेरणा मिलती आई है। इस दृष्टि से मनुष्य अपने शिक्षकों का चिर ऋणी रहेगा।

"अध्यापक राष्ट्र की संस्कृति का चतुरमाली होता है,जो संस्कारों की जड़ों में अपने ज्ञान की खाद देते हैं और अपने श्रम से सींच–सींच कर उन्हें महाप्राण शक्तियां बना देते हैं।"

–अरविंद घोष

जिस प्रकार बाग में माली पौधों के विकास के लिए उचित वातावरण तैयार करता है,उसी प्रकार विद्यालयों में अध्यापकों को बालकों के समुचित विकास के लिए उचित वातावरण तैयार करना होता है,किंतु यदि माली अपने कार्य के प्रति अभिवृत्ति नहीं रखता और संतुष्ट नहीं रहता तो क्या वह पौधों के विकास में पूरा योगदान दे सकेगा ?

प्रस्तुत अनुसंधान का महत्व एंव शैक्षिक उपादेयता एक सफल शिक्षक के महत्व उसकी शैक्षिक वाद से संबध रखती है। अध्यापक की सफलता एंव असफलता ही शिक्षा प्रक्रिया की सफलता एंव असफलता है,किंतु शिक्षकी की सफलता एंव असफलता के मानक क्या है ?यह प्रश्न विवादास्पद है।क्या अच्छी श्रेणी में उत्तीर्ण शिक्षक ही सफल शिक्षक है,या अच्छा परीक्षाफल लाने वाला शिक्षक ही सफल शिक्षक है यदि निरपेक्ष ढंग से देखा जाये तो शिक्षक की सफलता एंव असफलता में द्योतक उसके द्वारा शिक्षित किये गये छात्र हैं। यदि शिक्षक

द्वारा शिक्षित छात्रों का सर्वांगीण विकास हुआ है,छात्र अपनी सामाजिक एंव वैयक्तिक परिस्थितियों में अपना समायोजन कर लेता है तो निश्चित ही वह शिक्षक अपने स्थान पर पूर्ण सफल है।किंतु इस उद्देश्य की पूर्ति संभव है,जबकि अध्यापन कार्य में लगे हुए व्यक्ति अपने व्यवसाय के प्रति उचित अभिवृत्ति रखेगें और अपने व्यवसाय से पूर्णतया संतुष्ट होंगे तथा इस व्यवसाय को महान कार्य के रूप मे अपनायेगें।

1.5 शोध में प्रयुक्त शब्दावली की परिभाषा–

1.5.1 प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापक –

प्रस्तुत अध्ययन का क्षेत्र मध्यप्रदेश राज्य है। मध्यप्रदेश राज्य में भोपाल के दक्षिण क्षेत्र के प्राथमिक विद्यालयों के अंतर्गत 1 से 8 कक्षा को ही स्थान दिया गया है। प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापक यानि कि जो स्थाई रूप से अध्यापन व्यवसाय से जुड़े हैं और पूर्ण वेतन प्राप्त कर रहे हैं। ऐसे अध्यापकों को शामिल किया गया है।

1.5.2 अध्यापन अभिवृत्ति

शिक्षा का मुख्य उद्देश्य समाज की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं के अनुरूप बालक के व्यवहार को परिमार्जित करता है।

किसी वस्तु,व्यक्ति या विचार के प्रति व्यक्ति किस प्रकार का व्यवहार करेगा यह बहुत कुछ उस व्यक्ति की उनके प्रति बनी अभिवृत्तियों पर निर्भर करता है। व्यवहार ही नहीं व्यक्ति का सम्पूर्ण व्यक्तित्व भी उसकी अभिवृत्तियों के अनुकूल ही ढलता है। जो कुछ भी व्यक्ति सीखता है और आदतों तथा रूचि आदि को ग्रहण करता है वह सभी उसकी अभिवृत्तियों द्वारा प्रभावित होता है। अतः एक अध्यापक को अभिवृत्तियों के अर्थ एंव प्रकृति उनके निर्माण और विकास संबधी तथ्य और उनकी मापन विधाओं से अच्छी तरह परिचित होना चाहिये।

"व्यवहार को कोई एक दिशा प्रदान करने वाली प्रतिक्रिया के लिए आवश्यक तत्परता का नाम अभिवृत्ति है।"

–ट्रेवर्स–1973,p.337

'अभिवृत्ति को हम किसी एक वस्तु से जुड़े हुए प्रत्ययों,विश्वासों,आदतों और अभिप्रेरणाओं के संगठन के रूप में परिभाषित कर सकते हैं।"

—मकेशी एंव डोयल;1966 p560

अभिवृत्ति पूर्ण नियोजन या तत्परता की वह व्यवस्था है जो सार्थक उद्दीपकों के प्रति पूर्व निश्चित तरीके से प्रतिक्रिया करने में सहायक होती है। अर्थात अभिवृत्ति को ऐसी प्रवृत्ति या तैयारी की मानसिक या शारीरिक अवस्था मानी जाती है,जो व्यक्ति को किसी एक परिस्थिति में एक निश्चित प्रकार का व्यवहार करने को प्रेरित करती है।

प्रस्तुत अनुसंधान में अभिवृत्ति का आशय शिक्षकों के द्वारा व्यक्त मत मन विचार से लिया गया है। शिक्षकों का दृष्टिकोण किसी प्रकार के व्यवहार को दिशा प्रदान करने वाली वह अर्जित प्रवृत्ति है जो किसी विशेष वस्तु के प्रति एक निश्चित प्रकार का व्यवहार करने को तत्पर करती है,बशर्ते कि वातावरण,जन्म परिस्थितियों में कोई प्रतिकूल परिवर्तन न हो। यह पूर्व धारणा होती है कि जो उनके प्रति सकारात्मक या नकारात्मक ढंग से प्रतिक्रियायें करवाती हैं।

प्रस्तुत अनुसंधान में अध्यापन व्यवसाय संबधी छह अभिवृत्तियों का समावेश किया गया है।—

- ☐अध्यापन व्यवसाय संबंधी
- ☐कक्षा अध्यापन संबंधी
- ☐छात्र-केन्द्रित व्यवहारों संबंधी
- ☐छात्रों संबंधी
- ☐शैक्षिक प्रकिया संबंधी
- ☐अध्यापकों संबंधी

1. अध्यापन व्यवसाय संबंधी—

परंपरागत चार प्रमुख व्यवसाय कानून,शिक्षा,धर्म और चिकित्सा में से शिक्षा एक व्यवसाय के रूप में स्वीकृत हुआ है। इस व्यवहार को व्यवसाय के रूप में अपनाने की प्रबल इच्छा हो वही व्यक्ति प्रभावी ढंग से कार्य कर सकता है।जिस व्यक्ति में मानव अधिकारों के

प्रति आस्था,सह-कर्मियों के प्रति आदर की भावना,कार्य के प्रति ईमानदारी,विद्यालय के प्रति कर्त्तव्यपरायणता तथा सामाजिक मूल्यों की वृद्धि करने की दृढ़ भावना हो तो वह व्यवसाय में सफल हो सकता है।

2. कक्षाध्यापन–

प्राचीन काल से अध्यापन का यह तरीका है कि एक अध्यापक अन्य छात्रों को कक्षा में एक साथ पढ़ाता है।कक्षा में सामूहिक शिक्षण की यह प्रणाली आज भी वैसी की वैसी चली आ रही है। नये कौशल और नया ज्ञान देने में तथा सर्वनिष्ठ त्रुटियों और गल्तियों को सुधारने में यह बड़ा उपयोगी सिद्ध होता है।

3. छात्रों के प्रति व्यवहार –

शिक्षा ऐसी होनी चाहिए कि जिससे छात्रों का स्वाभाविक विकास हो और उनकी आवश्यकताएं,रूचि,योग्यताएं का उपयोग का योग्य स्थान हो। अध्यापन छात्र केन्द्रित होना चाहिए। शिक्षा का केन्द्र बिन्दु न तो अध्यापक हो न ही विषय वस्तु ।छात्रों को अपने विचार प्रकट करने की पूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिए।

4. शैक्षिक प्रकिया–

किसी शैक्षिक संस्था में छात्रों को पढ़ाने या सिखाने की प्रकिया को शैक्षिक प्रकिया कहा जाता है ऐसी परिस्थितियां,कियायें,पद्धतियों की व्यवस्था करना जिससे बालक सीख सके।

5. छात्र–

विद्यार्थी –विद्या का अर्थी

विद्याा प्राप्त करना जिसका मूल्य ध्येय है।शाला के प्रति आदर,सहपाठियों में स्नेह व भाईचारा,अध्यापकों के प्रति सम्मान कार्यनिष्ठा आदि विशेषताएं जिसमें हो वह बालक।

6. अध्यापकों संबंधी:–

अध्यापक याने की शिक्षा प्रदान करने वाला राष्ट्र के नैतिक मार्गो

का निर्धारण करने वाला महत्वपूर्ण व्यक्ति। अध्यापक वह है,जो बच्चों के अर्न्तनिहित सूक्ष्म संवेदना व क्षमता को स्पन्दित करता है। उसे जगाता है और उसके भविष्य को दिशा प्रदान करता है।

1.5.3 व्यवसायिक सन्तुष्टि–

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से हम संतुष्टि का आवश्यकताओं में संबंध में ही अध्ययन करतें हैं।मनुष्य की आवश्यकताओं का वर्गीकरण मैस्लो महोदय ने पांच आवश्यकताओं में किया गया है।

1 मूल शारीरिक आवश्यकतायें,
2 सुरक्षा एंव बचाव,
3 प्रेम एंव सामाजिकता,
4. आत्म सम्मान की भावना,
5. आत्मानुभूति

1.6 शोध के चर

प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु अध्यापन अभिवृत्ति,व्यावसायिक सन्तुष्टि एंव लिंग को चर के रूप में चयनित किया गया है।

1.7 शोध के उद्देश्य–

1 प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों की अध्यापन अभिवृत्ति का अनुमापन करना।
2 प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों की व्यावसायिक संतुष्टि को ज्ञात करना।
3 प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों की अध्यापन अभिवृत्ति और व्यावसायिक संतुष्टि कें मध्य संबंध ज्ञात करना।

4 प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों के व्यावसायिक संतुष्टि में अनुकूल व्यावसायिक व प्रतिकूल व्यावसायिक संतुष्टि में संबंध ज्ञात करना है।

5 प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत महिला एंव पुरूष अध्यापकों की अध्यापन अभिवृत्ति में अन्तर ज्ञात करना।

6. प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षक अभिवृत्ति के विभिन्न घटकों में संबंध ज्ञात करना।

अनुसंधान की परिकल्पना–

1 प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों की अध्यापन अभिवृत्ति एंव व्यावसायिक संतुष्टि के मध्य सार्थक संबंध नहीं होगा।

2 प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के शिक्षण अभिवृत्ति में अन्तःसहसंबंध नहीं होगा।

3 प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों की व्यावसायिक संतुष्टि में अनुकूल व प्रतिकूल कथनों में सार्थक अन्तर नहीं होगा।

4 प्राथमिक विद्यालयों के महिला एंव पुरूष अध्यापकों की अध्यापना अभिरूचि में सार्थक संबंध नहीं होगा।

5 प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षक अभिवृत्ति के विभिन्न घटकों में सार्थक अन्तर नहीं होगा।

समस्या का सीमांकन

1 प्रस्तुत शोध कार्य मध्यप्रदेश राज्य भोपाल तक ही सीमित है।

2 शोध कार्य के लिए मध्यप्रदेश के भोपाल के दक्षिण क्षेत्र तक के कुछ विद्यालयों का चयन किया गया है।

3 शोध कार्य के लिए केवल 13 प्राथमिक विद्यालयों का ही चयन किया गया है।